SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

सह–जीवन सम्बन्ध: एक विधिक एवं सामाजिक चुनौतियाँ

आशीष कुमार त्रिपाठी, (Ph.D.) विधि विभाग
वी.एस.एस.डी. कालेज, कानपुर, उत्तरप्रदेश, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Author
आशीष कुमार त्रिपाठी (Ph.D.)

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 22/05/2023
Revised on : -----
Accepted on : 31/05/2023
Plagiarism : 00% on 22/05/2023

Plagiarism Checker X - Report
Originality Assessment
Overall Similarity: 0%
Date: May 22, 2023
Statistics: 0 words Plagiarized / 2668 Total words
Remarks: No similarity found, your document looks healthy.

शोध सार

विवाह एक सामाजिक संस्था है। विवाह दो विषम लिंगियों को पारिवारिक जीवन में प्रवेश करने की सामाजिक, धार्मिक, विधिक स्वीकृति है। एक व्यक्ति को अपनी रूचि के व्यक्ति के साथ शादी के साथ या बिना रहने का अधिकार है। भारत में ''शादी की प्रकृति के सम्बन्ध'' को मान्यता देने वाला कोई विधिक उपबन्ध नहीं था। अतः ऐसे रिश्तों में रहने वाली महिलाओं के वास्तव में कोई अधिकार नहीं थे। वर्ष 2005 में प्रथम बार ''शादी की प्रकृति में सम्बन्ध'' को विधिक मान्यता प्रदान किया गया। यदि कोई पुरुष और महिला लम्बे समय तक साथ रहते हैं, तो ऐसा विवाह वैध माना जायेगा एवं इन सम्बन्धों से जन्में बच्चों को भी वैध माना जायेगा और पैतृक सम्पत्ति में हिस्सा प्राप्त करने का अधिकार मिलेगा। शादी व विवाह सम्बन्ध सामाजिक जीवन के लिये अत्यन्त आवश्यक है, इससे सामाजिक सुरक्षा व अन्य स्त्री–पुरूष तथा ऐसे रिश्तों से उत्पन्न हुए बच्चों को सुरक्षा, सहायता, सहयोग प्राप्त होता है। अतः एक सुस्थापित व सुव्यवस्थित सामाजिक व्यवस्था की एक ईकाई से आगे बढ़कर एक संस्था होते हुए भी किन कारणों से ''शादी के समकक्ष रिश्तों'' को विधिक मान्यता प्रदान की गयी यह सामाजिक विषय होने के कारण विधिक रूप से आवश्यक है। इन रिश्तों को विवाह के समान तर्क संगत बनाया जाने के लिये विधिक परिवर्तन किया जाना आवश्यक है।

मुख्य शब्द

विवाह, विवाह–विच्छेद, घरेलू हिंसा अधिनियम, युगल, लिव–इन–रिलेशनशिप.

संक्षिप्त परिचय

भारत में विवाह एक सामाजिक संस्था है। सामान्य शब्दों में विवाह का अर्थ दो विपरीत लिंगी व्यक्तियों में यौन सम्बन्ध स्थापित करने की समाज की स्वीकृत विधि

है। विवाह दो विषम लिंगियों को पारिवारिक जीवन में प्रवेश करने की सामाजिक, धार्मिक, विधिक स्वीकृति है। स्त्री–पुरुषों एवं बच्चों को विभिन्न क्रियाओं में सहगामी बनाना, संतानोंत्पत्ति करना, तथा उनका लालन–पालन एवं समाजीकरण करना विवाह के प्रमुख कार्य हैं, किन्तु पश्चिमी सभ्यता वाले देशों के समाज से वैश्विक स्तर पर सह–जीवन सम्बन्ध का नया स्वरूप द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् 1960 के बाद तेजी से विकसित हुआ और 21वीं सदी में आधुनिक स्त्री–पुरुष साहचर्य के सिद्धांत में नया स्वरूप विकसित हुआ। सह–जीवन सम्बन्ध पश्चिमी देशों के समाज से उभरकर भारतीय समाज में परिवार का नया रूप है। लिव इन रिलेशनशिप को हम हिंदी में सह–जीवन कहते है। सह–जीवन सम्बन्ध (लिव इन रिलेशनशिप) एक ऐसी व्यवस्था है जिसमे दो लोग जिनका विवाह नहीं हुआ है, साथ रहते है और एक पति–पत्नी की तरह आपस में शारीरिक सम्बन्ध बनाते है। यह सम्बन्ध कई बार दीर्घ अवधि तक चलते है, या फिर स्थायी भी हो सकते है। ये ऐसे युगल होते है, जिन्हें पारम्परिक विवाह से कोई लेना देना नहीं होता है।

सह–जीवन सम्बन्ध की वैधता अनुच्छेद 19(क) भाषण एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार और अनुच्छेद 21 भारत के संविधान में जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार की सुरक्षा से उपजी है। जीवन का अधिकार किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता पर हर तरह से जीवन का आनंद लेने पर जोर देता है जबकि मौजूदा कानूनों द्वारा इसे प्रतिबंधित नहीं किया जाता है। यह एक स्वतन्त्र समाज है और कोई भी, जहां चाहे, वह रह सकता है। सह–जीवन सम्बन्ध के संदर्भ में अनुच्छेद 21 के अंतर्गत जीवन का अधिकार लागू होता है। एक व्यक्ति अपनी रूचि के व्यक्ति के साथ शादी के साथ या बिना रहने का अधिकार है।

भारत में ''शादी की प्रकृति में सम्बन्ध'' को मान्यता देने वाला कोई कानून नहीं था। अतः ऐसे रिश्तों में रहने वाली महिलाओं के वास्तव में कोई अधिकार नहीं थे, अतः इन रिश्तों में रहने वाली महिलायें न्यायालय से कोई सहायता प्राप्त नहीं कर सकती थी। वर्ष 2005 में प्रथम बार ''शादी की प्रकृति में सम्बन्ध'' को विधिक मान्यता प्रदान करते हुए एक नया कानून, ''घरेलू हिंसा से महिलाओं की सुरक्षा अधिनियम, 2005'' भारत में बनाया गया। इस अधिनियम, 2005 की धारा 2 (एफ) में ''पारिवारिक रिश्तों'' में अन्य रिश्तों के साथ में उन व्यक्तियों को भी सम्मलित किया गया जो ''शादी की प्रकृति में सम्बन्ध'' में एक साथ सम्मिलित रूप से साथ घर में रहते है अथवा कभी रहते थे। अतः अधिनियम, 2005 द्वारा ''पारिवारिक रिश्तों'' में विधि द्वारा एक नया रिश्ता जोड़ा गया है। पारिवारिक रिश्ता, विशेष रूप से शादी के समान रिश्ता क्या है इसको जानने के लिये यहां अधिनियम, 2005 की धारा 2 (एफ) व धारा (5) उल्लेखित करना आवश्यक है। घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 की धारा 2(एफ) के तहत सह–जीवन सम्बन्ध को परिभाषित किया गया है। अधिनियम की धारा 2(एफ) एवं धारा 2(5) दोनों के संयुक्त अध्ययन से पारिवारिक रिश्ता विशेष रूप से शादी के सामान रिश्ता को समझा जा सकता है। इसके अनुसारः

1. सह–जीवन सम्बन्ध के लिये एक युगल का पति–पत्नी की तरह साथ रहना आवश्यक है। यद्यपि इसके लिए कोई समय सीमा निर्धारित नहीं है, लेकिन लगातार साथ रहना आवश्यक है। कभी कोई साथ रहे, फिर अलग हो जाये एवं फिर कुछ दिन साथ रहे, ऐसे सम्बन्ध को सह–जीवन सम्बन्ध की श्रेणी में नहीं रखा जायेगा।
2. सह–जीवन सम्बन्ध में रहने वाले युगल का एक ही घर में साथ–साथ पति पत्नी की तरह रहना आवश्यक है।
3. युगल को संयुक्त रूप से एक ही घर के सामान का इस्तेमाल करना होगा।
4. सह–जीवन सम्बन्ध में रह रहे युगल को घर के कार्यों में एक दूसरे की सहायता करनी होगी।
5. यदि सह–जीवन सम्बन्ध में रह रहे युगल के बच्चे हो जायें तो उन्हें भरपूर प्रेम व स्नेह देना होगा। बच्चों का उचित पालन–पोषण करना होगा।
6. इस सम्बन्ध में रहने के लियें दोनों पार्टनर का वयस्क होना आवश्यक है।

घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 की कमियाँ

अधिनियम की कमियाँ निम्नलिखित हैः

1. ''शादी की प्रकृति में सम्बन्ध'' के स्थापित करने हेतु पक्षकारों की योग्यता को परिभाषित नहीं किया गया है।
2. ''शादी की प्रकृति में सम्बन्ध'' बनानें के लिये क्या प्रक्रिया होगी? यह अधिनियम में परिभाषित नहीं है।
3. ''शादी की प्रकृति में सम्बन्ध'' में विवाह–विच्छेद सम्बन्धित प्रावधान नहीं है।
4. विवाह का पंजीकरण आवश्यक होने के पश्चात् भी ''शादी की प्रकृति में सम्बन्ध'' के पंजीकरण हेतु कोई प्रावधान उपबन्धित नहीं है।

सह–जीवन सम्बन्ध से सम्बन्धित सामाजिक एवं विधिक समस्या

1. विवाह संस्था के मूल्य में कमीः सह–जीवन सम्बन्ध में बिना किसी सामाजिक संस्कार के युगल आपसी सहमति से एक साथ रहते है जिससे विवाह जैसी सामाजिक संस्थाओं के मूल्य में कमी आ रही है।
2. शारीरिक और यौन शोषण की समस्याः सह–जीवन सम्बन्ध की कोई सीमा नहीं होती, इसमें रहने वाले युगल के सभी अधिकार विवाह के समकक्ष ही होते है। ऐसे रिश्तों में यौन और शारीरिक शोषण भी एक चिंता का विषय है। सह–जीवन सम्बन्ध का सम्बन्ध समाप्त होने के पश्चात् पीड़िता के पास विधिक उपचार का अभाव है।
3. सह–जीवन सम्बन्ध में जन्में बच्चे के विधिक अधिकारः सह–जीवन सम्बन्ध में रहने वाले युगल के बच्चों का भविष्य कभी भी विवाहित युगल की तरह सामान्य नहीं होता है। समाज ऐसे बच्चों को कभी भी प्यार और स्नेह से स्वीकार नहीं करता है।

महत्वपूर्ण वाद

सह–जीवन सम्बन्ध को लेकर भारतीय समाज का नजरिया बहुत सकारात्मक नहीं रहा है, लेकिन न्यायिक फैसलों ने कई मौकों पर लिव–इन रिलेशनशिप की वैधता को साबित किया है। अदालत ने सह–जीवन सम्बन्ध में महिलाओं के अधिकार को विधिक दर्जा भी दिया है।

1978 में बद्री प्रसाद प्रति डायरेक्टर ऑफ कंसोलिडेशन के वाद में मा0 उच्चतम न्यायालय ने पहली बार सह–जीवन सम्बन्ध को मान्यता दी थी। यह माना गया था कि शादी करने की उम्र वाले लोगों के बीच सह–जीवन सम्बन्ध किसी भारतीय कानून का उल्लंघन नहीं है। उच्चतम न्यायालय ने कहा कि यदि कोई युगल लम्बे समय से साथ रह रहा है, तो उस रिश्ते को 'शादी' ही माना जायेगा। मा0 न्यायालय ने 50 वर्ष के लिव–इन रिलेशनशिप को वैध ठहराया था।

पायल शर्मा प्रति नारी निकेतन के प्रकरण में मा0 न्यायालय ने माना कि एक आदमी और औरत को अपनी मर्जी से एक–दूसरे के साथ बिना शादी किये सह–जीवन सम्बन्ध में रहने का अधिकार है। मा0 न्यायालय ने यह भी स्पष्ट किया कि हमारा समाज लिव–इन रिलेशनशिप को अनैतिक मानता है, यद्यपि विधि की दृष्टि में न तो यह विधिविरूद्ध है और न ही अपराध है।

इंदिरा शर्मा प्रति वी.के. शर्मा के वाद में मा. उच्चतम न्यायालय ने बताया कि घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 में ''पारिवारिक रिश्तों'' की जो परिभाषा है, उसमें सह–जीवन सम्बन्ध भी शामिल है।

बालसुब्रमण्यम प्रति सुरत्तयन के वाद में 'लिव इन रिलेशनशिप' से जन्में बच्चों को पहली बार वैधता प्रदान की। मा. उच्चतम न्यायालय ने कहा कि यदि कोई पुरुष और महिला लम्बे समय तक साथ रहते हैं, तो ऐसा विवाह वैध माना जायेगा एवं इन सम्बन्धों से जन्में बच्चों को भी वैध माना जायेगा और पैतृक सम्पत्ति में हिस्सा प्राप्त करने का अधिकार मिलेगा।

जिस तरह पति की मृत्यु के बाद पत्नी का दिवंगत पति की सम्पत्ति पर अधिकार प्राप्त होता है, उसी तरह एक महिला के लिव–इन–पार्टनर की मृत्यु के बाद उसकी विरासत में मिली सम्पत्ति पर अधिकार प्राप्त होता है।

धनूलाल प्रति गणेश राम के वाद में न्यायालय ने माना कि यदि सह–जीवन सम्बन्ध लम्बे समय तक चलता है, तो उसे एक शादी की तरह ही माना जायेगा। इस मामले में परिवार के सदस्यों ने दलील दी कि उसके दादा पिछले 20 वर्ष से उस महिला के साथ रह रहे थे। दादा ने उस महिला से शादी नहीं की थी इसलिए वह उनकी मृत्यु के बाद सम्पत्ति की अधिकारी नहीं थीं। न्यायालय ने कहा कि जहाँ पुरुष और महिला पति–पत्नी के रूप में एक साथ रह रहे थे, उस स्थिति में विधि की मान्यता है कि वह एक वैध विवाह में एक साथ रह रहे थे।

सह–जीवन सम्बन्ध व विवाह के रिश्ते क्या है?, इसके सम्बन्ध में मा. सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इन्द्रा शर्मा बनाम वी. के. वी. शर्मा के निर्णय में विस्तार से चर्चा की गयी। मा. सर्वोच्च न्यायालय द्वारा शादी की प्रथा को राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय रूप से स्वीकृत घोषित करते हुये दाऊद और अन्य प्रति गृह मामलों के मंत्री एवं अन्य के प्रकरण का भी उल्लेख किया गया है। शादी को व परिवार को सामाजिक व्यवस्था के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। शादी को पक्षकारान के अन्य दायित्वों के साथ एक–दूसरे के भरोसे व विश्वास को पूरा महत्व दिया गया है और कहा गया है कि शादी व परिवार की व्यवस्था सामाजिक व्यवस्था, सुरक्षा, सहायता, सहयोग तथा बच्चों के पालन में अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान देते है।

मा. सर्वोच्च न्यायालय द्वारा शादी, विवाह सम्बन्ध ही नहीं ''शादी की प्रकृति में सम्बन्ध'' शादी के प्रकृति के सम्बन्ध, दोनों विषय पर न सिर्फ इन्द्रा शर्मा के प्रकरण व अन्य माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय, डी. वेलुसामी प्रति डी. पच्चईअम्मल – एस. खुशबू प्रति कन्नियाम्मल और अन्य व अनेकों निर्णयों में विस्तार से विचार किया जा चुका है। शादी व विवाह सम्बन्ध सामाजिक जीवन के लिये अत्यन्त आवश्यक व्यवस्था है, इससे सामाजिक सुरक्षा व अन्य स्त्री–पुरूष तथा ऐसे रिश्तों से उत्पन्न हुए बच्चों को सुरक्षा, सहायता, सहयोग व एक व्यवस्था प्राप्त होती है। अतः एक सुस्थापित व सुव्यवस्थित सामाजिक व्यवस्था की एक इकाई से आगे बढ़कर एक संस्था होते हुए भी किन कारणों से ''शादी के समान रिश्तों'' को विधिक मान्यता प्रदान कर नया कानून बनाया गया, और यह सामाजिक विषय होने के कारण विधिक रूप से आवश्यक है। इन रिश्तों को विवाह के समान तर्क संगत बनाया जाने के लिये विधिक परिवर्तन किया जाना आवश्यक है।

सुझाव

1. सह–जीवन सम्बन्ध को विधिक रूप से मान्यता दिये जाने के साथ ही, भरण–पोषण तथा उत्तराधिकार सम्बन्धी स्पष्ट विधि बनाने की आवश्यकता है।
2. सह–जीवन सम्बन्ध में रहने वाली महिलाओं को घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 में अधिकार प्रदान किये गये हैं। इसके पश्चात् भी सह–जीवन सम्बन्ध में रहने वाले युगल के सम्बन्ध में किसी आपसी विवाद के उत्पन्न होने की स्थिति में सम्बन्धित विवाद के तथ्यों को ध्यान में रखकर निर्णय लिया जाना चाहिये।
3. सह–जीवन सम्बन्ध के पश्चात् उत्पन्न होने वाले बच्चों का सह–जीवन सम्बन्ध में रहने वाले युगल की सम्पत्ति के अतिरिक्त पैतृक सम्पत्ति में भी उत्तराधिकार मिलना चाहिए अथवा नहीं। इस विषय पर भी स्पष्ट नीति या विधिक उपबन्ध किये जाने की आवश्यकता है।
4. मा. सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सह–जीवन सम्बन्ध हेतु आवश्यक बतायी गयी शर्तों के अधीन पक्षकारों में से यदि किसी एक पक्ष द्वारा सह–जीवन सम्बन्ध को छोड़कर अन्य से नियमित विवाह किया जाता है, तो ऐसे में सह–जीवन सम्बन्ध के युगल को अन्य विवाह रूकवाने का अधिकार होना चाहिए।
5. सह–जीवन सम्बन्ध के दौरान बने रिश्ते जो लगातार कई वर्षों से चले आ रहे हैं, के अन्तर्गत एक पक्ष दूसरे के बिना सहमति अथवा बिना अन्य पक्ष की गलती के सम्बन्ध–विच्छेद करता है, ऐसे प्रकरण में न्यायालय से सम्बन्ध–विच्छेद की डिक्री लिया जाना आवश्यक होना चाहिए, जिससे कि सामान्य विवाह की भांति पक्षकारों को आपस में पुनः विचार करने का और अपना पक्ष रखने का अवसर प्रदान हो सके।
6. धारा 125, दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 में परिभाषित 'पत्नी' शब्द में सह–जीवन सम्बन्ध में रहने वाली 'स्त्री' को भी शामिल किया जा सकता है।

7. भारतीय दण्ड संहिता, 1860 की धारा 498क में भी किसी स्त्री के साथ सह–जीवन सम्बन्ध में रहने वाली स्त्री शब्द जोड़ दिया जाये, तो क्रूरता होने पर आपराधिक कार्यवाही की जा सकती है।
8. धारा 494 एवं 497 भारतीय दण्ड संहिता, 1860 में भी सह–जीवन सम्बन्ध में रहने वाली 'स्त्री' जोड़ा जा सकता है।
9. भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 112 में जन्म के धर्मजत्व के निश्चयात्मक सबूत के सम्बन्ध में सह–जीवन सम्बन्ध में रहने वाली स्त्री को भी स्थान दिया जा सकता है।
10. हिन्दू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 की धारा 16 एवं अनुसूचीः प्रथम व द्वितीय में सह–जीवन सम्बन्ध में रहने वाली स्त्री को शामिल किया जा सकता है।
11. सह–जीवन सम्बन्ध का रजिस्ट्रेशन होना आवश्यक किया जाये एवं दोनों पक्षों में से किसी भी पक्ष द्वारा रजिस्ट्रेशन को निरस्त करवाये जाने का प्रावधान होना चाहिए जिसकी एक पृथक युक्तियुक्त प्रक्रिया निर्धारित की जानी चाहिए।
12. सह–जीवन सम्बन्ध की निश्चित परिभाषा भी निर्धारित की जानी चाहिए; तथा पत्नी, बच्चे एवं पति के अधिकार एवं दायित्व भी स्पष्टतया निर्धारित किये जाने चाहिए।

निष्कर्ष

सह–जीवन पश्चिमी देशों के समाज से उभर कर भारतीय समाज में आया परिवार का नया आयाम है, जहाँ सह–जीवन सम्बन्ध मात्र दो लोंगों के आपसी सहमत और सम्भोग का ही प्रतिरूप है। यह समाज के लिये कई तरह की समस्या का रूप धारण न कर ले इसके लिये विवाह जैसी संस्थाओं द्वारा स्त्री–पुरुष द्वारा स्थापित परिवार में सभी के विधिक सामजिक अधिकारों को पूर्ण रूप से संरक्षित माना जाता है।

सन्दर्भ सूची

1. (2017) 10 SCC 800.
2. 2010 (5) SCC 600.
3. (2010) 10 scc 469.
4. 2000 (3) SA 936 (CC).
5. (2013) 15 एस.एस.सी. 755
6. ए.आई.आर. 1978 एस.सी. 1557
7. ए.आई.आर. 2001 इला. 254 : 2001 एस.एस.सी. 332 इला.: 2001(3) ए.डब्ल्यू.सी. 1778
8. भारतीय दण्ड संहिता, 1860।
9. हिन्दू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005
10. दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973
11. भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872
12. भारत का संविधान
13. घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005
14. पाठक अरूण कुमार, (2022) *सह–जीवन सम्बन्ध कानूनी वैधता,* युनिवर्सल लॉ पब्लिशर्स, प्रयागराज।
15. Protection of Children from Sexual Offences (POCSO) Act, 2012.

****